2

समाज कार्य अवधारणाओं का परिचय–II

* सुरेन्द्र सिंह

प्रस्तावना

इस अध्याय में हम अवधारणाओं का अपना अध्ययन आगे बढ़ाते हैं जो कि समाज कार्य व्यवसाय के लिए प्रासंगिक हैं। यहाँ हम अवधारणाओं जैसे– समाज सेवा, समाज कल्याण, समाज कार्य, सामाजिक नीति, सामाजिक न्याय, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक प्रतिरक्षा के साथ कार्य करते हैं। आधुनिक राज्य ने इसके नागरिकों के कल्याण को सुनिश्चित करने में मुख्य उत्तरदायित्व ग्रहण किया है। व्यक्तियों और संस्थाओं द्वारा स्वैच्छिक क्रिया भी इन प्रयासों की कमी को पूरा करने के लिए योगदान देती है। कुछ मामलों में स्वैच्छिक संस्थाएं मानवाधिकारों और सरकार की असंयत गतिविधियों से सम्बन्धित मुद्दों को उठाकर के द्वारा सरकार के कार्यों के आलोचक के रूप में कार्य करती हैं।

समाज सेवा, सामाजिक प्रतिरक्षा, सामाजिक सुरक्षा तथा समाज कल्याण

समाज सेवा

प्रत्येक सभ्य समाज, अपने सदस्यों को एक बन्धनमुक्त, सम्मानपूर्ण, सुसभ्य और गौरवपूर्ण जीवन के लिए अग्रसर होने हेतु सक्षम करने के उद्देश्य से और उसके लिए उनकी शक्तियों की अनुकूल प्राप्ति, प्रतिभाओं तथा क्षमताओं द्वारा समुचित व्यक्तित्व के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए, विभिन्न प्रकार की सेवाओं जैसे– स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा, मनोरंजन इत्यादि की व्यवस्था करता है। स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है, सेवा शब्द का तात्पर्य है " एक सहायतापूर्ण क्रियाकलाप का कार्य; सहायता करना" (वेबस्टर्स इनसाइक्लोपेडिक अनएब्रिज्ड डिक्शनरी 1996:1304)। सहायता शब्द का अर्थ सहायता दे कर आगे बढ़ाना नहीं है। इसकी उत्पत्ति जर्मन शब्द 'हेल्पन' (Helpan) से हुई है जिसका अर्थ दूसरे को समाज के एक उत्तरदायी सदस्य के रूप में सामाजिक रूप से अपेक्षित भूमिका के निष्पादन के विशेष ढंग से उसे अधिक प्रभावकारी बनाने हेतु अन्य क्रियाओं या संसाधनों के कुछ प्रकार के प्रबलीकरण या अनुपूरण के माध्यम से मदद या सहयोग देना है (वेबस्टर्स इनसाइक्लोपेडिक अनएब्रिज्ड डिक्शनरी 1996:859)। इस प्रकार अपने अत्यधिक व्यापक अर्थ में समाज सेवा का अभिप्राय है समाज द्वारा अपने सदस्यों को समर्थ के लिए समाज

* सुरेन्द्र सिंह, कुलपति, म.गां. काशी विद्यापीठ, वाराणसी

अर्थ में समाज सेवा का अभिप्राय है समाज द्वारा अपने सदस्यों को समर्थ के लिए समाज द्वारा अपेक्षित/विहित भूमिकाओं के प्रभावपूर्ण रूप से निर्वाह करने हेतु उनकी शक्तियों को अनुकूल रूप से वास्तविक बनाने और बाधाओं को दूर करने जो कि व्यक्तित्व विकास और सामाजिक क्रियाशीलता के मार्ग में आती है के लिए कोई मदद या सहायता प्रदान करना है। एच.एम. कैसिडी (1943:13) के अनुसार शब्द " समाज सेवाओं" का अर्थ है "वे संगठित क्रियाकलाप जो मुख्यतः तथा प्रत्यक्ष रूप से मानवीय संसाधनों के संधारण, संरक्षण और उन्नति से सम्बन्धित है," और "सामाजिक सेवाओं के रूप में सम्मिलित है" सामाजिक सहायता, सामाजिक बीमा, बाल कल्याण, संशोधन, मानसिक स्वास्थ्य, जन स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन श्रमिकों का संरक्षण और आवास की सुविधा" (फीडलेण्डर, 1963:4) .

इस प्रकार सामाजिक सेवाएँ वे सेवाएँ है जो समाज द्वारा उसके सदस्यों को अनुकूल रूप से विकास करने हेतु समर्थ करने और प्रभावपूर्ण रूप से कार्य करने हेतु सहायता करने तथा शालीनता, गौरव और स्वतंत्रता के जीवन की ओर आगे बढ़ने के लिए परिकल्पित और प्रदान की जाती हैं। ये सेवाएं समाज के सभी सदस्यों को, उनके धर्म,जाति, प्रजाति, भाषा, क्षेत्र संस्कृति इत्यादि का विचार किये बिना प्रत्यक्ष रूप से लाभ पहुँचाती हैं।

साहित्य में उपयोग किये जाने वाले दो अन्य शब्द है लोक सेवायें और सामाजिक कल्याण सेवाएं। 'लोक सेवाओं' और 'समाज सेवाओं' के बीच एक सूक्ष्य भेद है कि पहली, समाज द्वारा एक संस्था के रूप में स्थापित राज्य द्वारा उसके नागरिकों से सम्बन्धित मामलों का प्रबन्ध करने के लिए परिकल्पित और संगठित की जाती हैं परन्तु इसके विपरीत, दूसरी, समाज में प्रबुद्ध व्यक्तियों के रूप में लोगों द्वारा मानव और सामाजिक विकास को प्रोत्साहन देने के लिए परिकल्पित और संगठित की जाती हैं। इस सूक्ष्म भेद के बावजूद दोनों शब्द प्रायः अंतर्परिवर्तनीय रूप से प्रयोग किये जाते हैं और एक दूसरे के पर्यायवाची के रूप में ग्रहण किये जाते हैं।

वर्तमान में जबकि राज्य क्रमिक रूप से सामाजिक क्षेत्र से हट रहा है और सब कुछ बाजार की शक्तियों/निगमों या निगमित निकायों या संगठनों और नागरिक समाज संगठनों पर छोड़ रहा है, 'समाज सेवाओं' शब्द का उपयोग 'लोक सेवाओं' शब्द की तुलना में अधिक उचित है।

समाज कल्याण सेवाएं वह 'सामाजिक/लोक सेवाएं हैं जो कि विशेष रूप से समाज के कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों हेतु उन्हें समाज के अन्य वर्गों के साथ मुख्य धारा में जुड़ने के लिए प्रभावपूर्ण रूप से प्रतिस्पर्धा करने के लिए शक्ति प्रदान करने हेतु परिकल्पित और तैयार की जाती हैं।

छोड़ रहा है, 'समाज सेवाओं' शब्द का उपयोग 'लोक सेवाओं' शब्द की तुलना में अधिक उचित है।

समाज कल्याण सेवाएं वह 'सामाजिक/लोक सेवाएं हैं जो कि विशेष रूप से समाज के कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों हेतु उन्हें समाज के अन्य वर्गों के साथ मुख्य धारा में जुड़ने के लिए प्रभावपूर्ण रूप से प्रतिस्पर्धा करने के लिए शक्ति प्रदान करने हेतु परिकल्पित और तैयार की जाती है।

समाज सेवाओं की विशेषताएँ निम्नलिखित प्रकार से है:

1) सामाजिक/लोक सेवाएँ, समाज/राज्य द्वारा परिकल्पित और संगठित की जाती है।
2) ये सेवाएँ समाज के सभी वर्गों को प्रत्यक्ष रूप से लाभ प्रदान करती हैं।
3) इन सेवाओं का एक अत्यधिक व्यापक कार्य क्षेत्र है, प्रत्येक वस्तु जो लोगों के जीवन की गुणवत्ता से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित है इसमें सम्मिलित है।
4) इन सेवाओं का लक्ष्य मानवीय और सामाजिक विकास को बढ़ावा देना, लोगों के मानवधिकारों का संरक्षण करना और उनके बीच समाज के प्रति एक कर्तव्य बोध को उत्पन्न करना है।

समाज सेवाएँ समाज कार्य के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि–

1) समाज कार्य मानवीय और सामाजिक विकास को बढ़ावा देने से सम्बन्धित है।
2) समाज कार्य प्रभावी सामाजिक क्रियाशीलता को बढ़ाने का उपाय खोजता है और नयी सामाजिक संस्थाओं को उत्पन्न करता है जो कि आवश्यक है तथा विद्यमान संस्थाओं का इस उद्देश्य से परिवर्द्धन करता है कि लोग अनुकूल रूप से अपनी शक्तियों का अनुभव कर सकें और समाज की उपयुक्त क्रियाशीलता के प्रति अपने अंशदान का योगदान दे सकें।
3) समाज कार्य का लक्ष्य पर्यावरण के संरक्षण और विकास करने के द्वारा 'सतत' विकास को प्रोत्साहन देना है ताकि पर्याप्त संसाधन भावी पीढ़ी के भी उपयुक्त जीवन को आगे बढ़ाने हेतु शक्ति प्रदान करने के लिए शेष रह सकें।

सामाजिक प्रतिरक्षा

भूल सुधार के वर्तमान काल में जिसके अन्तर्गत दण्ड के सुधारात्मक सिद्धान्त का इस आधार पर कि 'अपराधी जन्मजात नहीं होते हैं बल्कि प्रतिकूल और कष्टकर सामाजिक

दशाएं जो कि एक सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत प्रचलित होती हैं के द्वारा बनते हैं पुरजोर तरीके से समर्थन किया जाता है। इसी प्रकार, एक मनुष्य के रूप में एक सभ्य समाज का सदस्य होने के नाते अपराधी के हितों को प्रोत्साहन देने के लिए समाज के संरक्षण हेतु एक कार्य, भी व्यापक रूप से प्रदर्शित होता है।

शब्द 'सामाजिक प्रतिरक्षा' के संकुचित और व्यापक दोनों गुणार्थ है। इसके संकुचित अर्थ में, यह लोगों के उपचार और कल्याण जो नियमों के साथ संघर्ष में आते हैं तक सीमित रहता है। इसके व्यापक अर्थ में, इसके विस्तार क्षेत्र के अन्तर्गत विशेष रूप से समाज के अन्तर्गत साधारण नियन्त्रण के उपाय और अपराध के लिए सम्पूर्ण निवारक, चिकित्सकीय और पुर्नवासन सेवाएँ सम्मिलित हैं।

सामाजिक प्रतिरक्षा का लक्ष्य समाज की विभिन्न प्रकार के विचलनों से संरक्षण करना है जो कि व्यापक रूप से प्रसारित सामाजिक विघटन में परिणत होते हैं, जो गम्भीर रूप से प्रभावी सामाजिक क्रियाशीलता का भेदन करते हैं। सामाजिक प्रतिरक्षा की किसी विचार पूर्ण नीति और नियोजित कार्यक्रम की अनुपस्थिति में, किसी समाज के सभी सदस्यों के खुशहाल और शान्तिपूर्ण जीवन को सुनिश्चित करने के लिए समाज के आधारभूत उद्देश्य गम्भीर रूप से बाधित हो जाते हैं। इस प्रकार सामाजिक प्रतिरक्षा विघटनकारी शक्तियों के हमलों के विरुद्ध स्वयं की रक्षा के लिए जो इसकी कानून और व्यवस्था को खतरे में डालते हैं, जिसके फलस्वरूप इसके सामाजिक – आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न होती है, समाज द्वारा निर्मित किया गया एक नियोजित, सुविचरित और व्यवस्थित प्रयास है। समाज के प्रचलित कानून के उल्लंघन के लोगों के कृत्यों की घटनाओं में वृद्धि के साथ,नीतियों एवं योजनाओं और व्यवस्थित कार्यक्रमों को निरूपित करना अनिवार्य हो गया है जो कि गैर कानूनी गतिविधियों के निवारण और अपराधियों के इस उद्देश्य से उपचार पुर्नवासन कि वे स्वयं शालीन और गौरवशाली जीवन की ओर आगे बढाने के योग्य हो सके और समाज की प्रभावपूर्ण क्रियाशीलता के प्रति अपना सर्वोत्तम योगदान दे सके, में सहायता कर सकेगा।

सामाजिक प्रतिरक्षा में बाल अपराध एवं अपराध के निवारण और नियन्त्रण, कारागारों में कल्याण सेवाओं, मुक्त किये गये कैदियों के लिए उत्तरकालीन देखभाल सेवाओं, परिवीक्षा सेवाओं, अनैतिक आचरणों के उन्मूलन, भिक्षावृत्ति के निवारण एवं भिक्षको के पुर्नवासन, मादक द्रव्यों के दुरूप्रयोग एवं मद्य–व्यसनता के निवारण एवं नियन्त्रण तथा मादक द्रव्य व्यसनियों तथा मदिरा पान करने वालों के उपचार एवं पुर्नवासन से सम्बन्धित मानक सम्मिलित होते हैं।

सुधारात्मक सेवाएँ जो कि प्रतिरक्षा कार्यक्रम का भाग है समाज कार्य व्यवहार का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। समाज कार्यकर्ता, देखभाल कार्यकर्ताओं, परिवीक्षा – अधिकारियों बाल सुधार गृहों के प्रबन्धकों के रूप में कार्य कर रहे है।

सामाजिक सुरक्षा

सुरक्षा, जैसे – खतरे या जोखिम से मुक्ति लोगों की एक स्वीकृत आवश्यकता है। प्रत्येक व्यक्ति किसी भी प्रकार की आकस्मिक घटना के विरूद्ध संरक्षण चाहता है जो उसकी सुरक्षा को खतरे में डाल सकता है और जिससे उसकी आय की निरन्तरता के जोखिम में पड़ने की आशंका हो; और यह सुरक्षा विभिन्न प्रकार की संस्थाओं जो कि तीव्रता से परिवर्तित हो रही हैं के माध्यम से लोगों को आश्वस्त किया जाता है। मूल रूप से, भारत में यह सुरक्षा परिवार की संस्था और व्यावसायिक सहकारी समितियों के माध्यम से, और आगे क्रमानुसार संयुक्त परिवार व्यवस्था और जाति व्यवस्था द्वारा प्रदान की जाती थी; परन्तु काल के यथाक्रम में इन आधारभूत सामाजिक संस्थाओं का विघटन होना प्रारम्भ हो गया। प्रबुद्ध लोगों द्वारा यह महसूस किया गया था कि लोगों की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए समाज के स्तर पर कुछ सुविचारित प्रयास आवश्यक थे। इंग्लैण्ड में 1935 में यह प्रथम बार था, कि एक अग्रदूत– सर विलियम बेवेरिज, पाँच महा दानवों आवश्यकता, रोग, अज्ञानता, निष्क्रियता, और मलीनता के विरूद्ध मुक्ति के साधन के रूप में 'सामाजिक सुरक्षा' के विचार के साथ आगे आये। तब से सामाजिक सुरक्षा शब्द समाज विज्ञान साहित्य में व्यापक रूप से प्रयुक्त होने लगा।

समकालीन समाज में, सामाजिक सुरक्षा अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है क्योंकि:

1) परम्परागत सामाजिक संस्थाएँ जैसे– संयुक्त परिवार, जाति, व्यावसायिक सहकारी समितियाँ इत्यादि आवश्यक सुरक्षा की व्यवस्था करने में सक्षम नहीं हैं।

2) विज्ञान और प्रौद्योगिकी में एक क्रान्ति आयी है जो विश्वव्यापी ग्राम के आविर्भाव तथा लोगों के बीच सुगमता से गतिमान होने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन और यहाँ तक कि संसार के एक भाग से दूसरे भाग में प्रवास, दुर्घटनाओं की उत्पत्ति की बहुलता, यहाँ तक कि वह जो विनाशक है और व्यावसायिक बीमारियों सहित विभिन्न प्रकार की बीमारियों के प्रकट होने के लिए मार्गदर्शन दे रहा है। ये सभी लोगों को विभिन्न प्रकार के जोखिम प्रकट कर रहे हैं।

3) लोगों के मूल्यों एवं अभिमुखीकरण में समुद्रीय परिवर्तन हो गया है– समष्टिवाद से व्यक्तिवाद की ओर, आध्यात्मवाद से भौतिकवाद की ओर इसी तरह अन्य।

अतएव, लोगों में आज आधारभूत मानवीय संवेदनशीलता और दूसरों के प्रति लगाव का अभाव है और वे केवल स्वयं के या अधिक से अधिक अपने पारिवारिक सदस्यों के विषय में चिंतित हैं या अपनी आवश्यकताओं से घनिष्टता से सम्बन्धित हैं।

4) समाज का एक काफी बड़ा वर्ग है जो कि अशिक्षित, बेरोजगार और गरीब है तथा एक अमानवीय और असुरक्षित जीवन व्यतीत कर रहा है।

सर विलियम बेवेरिज (1942:120) ने सर्वप्रथम सामाजिक सुरक्षा को परिभाषित करते हुए विचार व्यक्त किये हैं " सामाजिक सुरक्षा ' शब्द का प्रयोग आय–अर्जन का स्थान लेने के लिए एक आय की सुरक्षा को व्यक्त करने, जब वे बेरोजगारी, बीमारी या दुर्घटना द्वारा बाधित हों, अन्य व्यक्ति की मृत्यु द्वारा उत्पन्न क्षति के लिए सहायता उपलब्ध करने तथा अतिरिक्त व्यय जैसे वह जो जन्म, मृत्यु और विवाह से सम्बन्धित हैं, की पूर्ति के लिए किया जाता है।"

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (1942:80) ने सामाजिक सुरक्षा को " एक ऐसी सुरक्षा के रूप में जो समाज, उपयुक्त संगठनों के माध्यम से, अपने सदस्यों के साथ घटित होने वाली कुछ निश्चित जोखिमों के विरूद्ध उपलब्ध कराता है," परिभाषित किया है।

क्रीडलेण्डर (1963:5) के अनुसार "सामाजिक सुरक्षा" के द्वारा हम समाज द्वारा आधुनिक जीवन की उन आकस्मिकताओं– बीमारी, बेरोजगारी, वृद्धावस्था, आश्रितता, औद्योगिक दुर्घटनाओं और अशक्तता जिनके विरूद्ध व्यक्ति से स्वयं उसकी योग्यता या दूरदर्शिता द्वारा उसके स्वयं के और उसके परिवार के संरक्षण की अपेक्षा नहीं की जा सकती है, के विरूद्ध प्रदत्त संरक्षण के एक कार्यक्रम के रूप मे समझ सकते हैं।"

भारत में राष्ट्रीय श्रम आयोग (1969:162) ने विचार व्यक्त किया है" सामाजिक सुरक्षा विचार करता है कि एक समुदाय के सदस्यों का सामूहिक कार्य द्वारा सामाजिक जोखिमों के विरूद्ध, जो व्यक्तियों के लिए अनुपयुक्त विपत्ति और अभाव उत्पन्न करते हैं जिनके व्यक्तिगत संसाधन उनकी पूर्ति के लिए कदाचित ही पर्याप्त हो सकते हैं, संरक्षण किया जायेगा"

इस प्रकार हम सामाजिक सुरक्षा को, समाज में लोगों द्वारा उनके भाइयों और बहनों की विभिन्न प्रकार की आकस्मिक परिस्थितियों, जो कि आकस्मिकताएँ कहलाती हैं उदाहरणार्थ, जैविक रूप में जैसे – मातृत्व, आर्थिक रूप में जैसे– बेरोजगारी और जैविक–आर्थिक रूप में जैसे – वृद्धावस्था जो उनकी कार्य करने की क्षमता को खतरे में डालती हैं और उनकी आय की निरन्तरता में बाधा डालती है तथा उसके द्वारा उनकी स्वयं की और उनके परिवार

के आश्रित सदस्यों की उपयुक्त और गौरव के साथ सहायता करने की क्षमता को क्षति पहुँचती है और जिसका सामना वे अपने स्वयं के और साथ ही आश्रितों के संसाधनों के उपयोग द्वारा नहीं कर सकते हैं, के अधिकार के विषय के रूप में संरक्षण हेतु किये जाने वाले सामूहिक प्रयास के रूप में परिभाषित कर सकते हैं।

सामाजिक सुरक्षा की प्रमुख विशेषताएँ हैं:

1) सामाजिक सुरक्षा वह सुरक्षा है जो समाज में लोगों द्वारा एक अधिकार के विषय के रूप में एक व्यवस्थित ढंग से सामूहिक प्रयास किये जाने के माध्यम से सुविचारित रूप से प्रदान की जाती है।

2) यह सामाजिक सुरक्षा विभिन्न प्रकार की आकस्मिकताओं या आकस्मिक परिस्थितियों जिनका लोग पालने से कब्र तक, जन्म से मृत्यु तक सामना कर सकते हैं, के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करती है।

3) ये आकस्मिकताएं कदाचित विशुद्ध रूप से जैविक, उदाहरणार्थ – मातृत्व, या ये कदाचित विशुद्ध रूप से आर्थिक, उदाहरणार्थ – बेरोजगारी, या ये कदाचित जैविक–आर्थिक, उदाहरणार्थ – अधिवर्षता सेवानिवृत्ति इत्यादि हो सकती हैं।

4) ये आकस्मिकताएं लोगों की कार्य करने की क्षमता को खतरे में डालती हैं और आय की निरन्तरता को अवरुद्ध करती हैं तथा स्वयं उनके और परिवार में उनके आश्रितों को एक सुसभ्य एवं सम्मानित जीवन के लिए आगे बढ़ने हेतु उनकी योग्यता को क्षति पहुँचाती है।

5) समाज में सामान्य लोगों के लिए स्वयं उनके और उनके आश्रितों के व्यक्तिगत संसाधनों के उपयोग द्वारा इन आकस्मिकताओं द्वारा प्रक्षेपित की गयी चुनौतियों का प्रभावशाली रूप से सामना कर पाना सम्भव नहीं है।

6) सामूहिक प्रयास हिताधिकारियों के लिए अंशदान करने की अनिवार्यता हो सकने या नहीं हो सकने को सम्भव बनाता है – कदाचित हित लाभ के लिए जिसका कि वे कुछ निश्चित विशिष्ट प्रकार की आकस्मिकताओं की उत्पत्ति की स्थिति में लाभ उठा सकते हैं, केवल नाममात्र का हो सकता है।

7) सामाजिक सुरक्षा हितलाभ कदाचित नकद अथवा वस्तु अथवा दोनों के रूप में हो सकते हैं।

8) सामाजिक सुरक्षा एक मानसिक अवस्था और विषयनिष्ठ तथ्य दोनों है। लोगों को आकस्मिकताओं के विरुद्ध समुचित संरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से, यह आवश्यक

हैं कि उन्हें दृढ़ विश्वास होना चाहिये कि जब कभी भी आवश्यक हो तो पर्याप्त गुणवत्ता और मात्रा में हितलाभ उपलब्ध होंगे।

सामाजिक सुरक्षा के तीन प्रमुख प्रकार हैं (1) सामाजिक बीमा (2)सार्वजनिक/सामाजिक सहायता (3) सार्वजनिक अथवा सामाजिक सेवायें। सामाजिक बीमा के विषय में, भावी हिताधिकारियों के लिए कुछ अंशदान करना आवश्यक है, यह कदाचित हितलाभ के लिए जो उन्हें आकस्मिकताओं की उत्पत्ति के मामले में दिया जाता है, केवल नाममात्र का हो सकता है। ये हितलाभ इतना दृढ़ होते हैं कि ये कदाचित निर्दिष्ट औसत आवश्यकताओं के लिए प्रबन्ध करने के योग्य हो सकते हैं। फिर भी, कुछ निश्चित मामलों में, कदाचित अंशदान के भुगतान की शर्त से विशेष छूट की अनुमति दी जा सकती है।

सार्वजनिक/सामाजिक सहायता विद्यमान वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति और एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर बनाये रखने के लिए लोगों को शक्ति प्रदान करने हेतु कदाचित नकद और/या वस्तु के रूप में दी जा सकती है। सार्वजनिक और सामाजिक सहायता के बीच एक सूक्ष्म अन्तर है कि सार्वजनिक सहायता सरकार के राजस्व विभाग के माध्यम से विद्यमान वास्तविक आवश्यकताओं के निर्धारण करने तथा यह सुनिश्चित करने कि भावी हिताधिकारियों ने कुछ निश्चित विहित योग्यताओं की शर्तों, पारिवारिक उत्तरदायित्व और ईमानदारी के अनुपालन से सम्बन्धित सहित, की पूर्ति कर ली है, के पश्चात् प्रदान की जाती है। सामाजिक सहायता कुछ नागरिक समाज संगठनों द्वारा कुछ निश्चित विशिष्ट कसौटियों के अनुसार गरीब लोगों को उपयुक्त मानने पर उनकी आधारभूत न्यूनतम आवश्यकताओं की सन्तुष्टि हेतु उन्हें समर्थ बनाने के लिए प्रदान की जाती हैं। सार्वजनिक/सामाजिक सेवायें, सरकार/समाज द्वारा मानवीय/सामाजिक विकास को बढ़ावा देने के लिए उपलब्ध करायी जाती हैं। कभी – कभी सार्वजनिक और सामाजिक सेवाओं के बीच एक सूक्ष्म भेद होता है – पहला, सरकार द्वारा संगठित और प्रदान किया जाता है और दूसरा समाज द्वारा कुछ नागरिक समाज की पहल के माध्यम से संगठित और प्रदान किया जाता है।

सामाजिक सुरक्षा की अवधारणा का ज्ञान किसी भी व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता के लिए अनिवार्य होता हैं क्योंकि वह मानवीय और सामाजिक विकास को बढ़ावा देने के लिए कार्य करता/करती है, प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर के आश्वासन की और निर्दिष्ट विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों में लोगों की सक्रिय सहभागिता को बढ़ाता/बढ़ाती है। यदि, लोगों की आय की निरन्तरता संकट में हो और उनकी कार्य करने की क्षमता दुर्बल हो तो उनके पारिवारिक आश्रितों और उनके स्वयं के संसाधनों के उपयोग द्वारा सामाजिक भूमिकाओं के प्रभावपूर्ण रूप से निष्पादन के लिए किसी भी प्रकार की

सामाजिक सुरक्षा की अवधारणा का ज्ञान किसी भी व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता के लिए अनिवार्य होता है क्योंकि वह मानवीय और सामाजिक विकास को बढ़ावा देने के लिए कार्य करता/करती है, प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर के आश्वासन की ओर निर्दिष्ट विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों में लोगों की सक्रिय सहभागिता को बढ़ाता/बढ़ाती है। यदि, लोगों की आय की निरन्तरता संकट में हो और उनकी कार्य करने की क्षमता दुर्बल हो तो उनके पारिवारिक आश्रितों और उनके स्वयं के संसाधनों के उपयोग द्वारा सामाजिक भूमिकाओं के प्रभावपूर्ण रूप से निष्पादन के लिए किसी भी प्रकार की सहायता की व्यवस्था के बिना, वे स्वयं अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के लिए सक्षम नहीं होंगे।

समाज कल्याण

पूरे विश्व में सभी सभ्य समाज सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। भारत में हमारे ऋषि–मुनियों ने सभी की खुशहाली की आकांक्षा की और ऐसी संस्थाओं को निर्मित करने का कार्य किया है जो सभी के कल्याण को बढ़ावा दे सके और समय – समय पर उन्हें दृढ़ता प्रदान कर सके। 'कल्याण' शब्द की उत्पत्ति, 'वेल्फेयरेन' (Welfaren) से हुई है, जिसका अर्थ है "कल्याण, सौभाग्य, स्वास्थ्य, खुशहाली,, सम्पन्नता इत्यादि से सम्बन्धित अवस्था अथवा दशा" (वेबस्टर्स इन साइक्लोपेडिक अनएब्रिज्ड डिक्शनरी, 1996:1619)। कल्याण पर अपने विचारों को व्यक्त करते हुए, सुगाता दास गुप्ता (1976:27) ने कहा है कि " कल्याण के द्वारा हम सामाजिक और आर्थिक, सेवाओं के सम्पूर्ण पुलिंदे जो कि एक ओर आय की सहायता, कल्याण प्रावधानों और सामाजिक सुरक्षा का वितरण करता है, तथा दूसरे, सामाजिक सेवाओं के पूरे प्रभाव क्षेत्र पर नजर रखता है, को समझ सकते हैं।"

समाज कल्याण, समाज द्वारा एक व्यापक प्रकार के तरीकों और साधनों के माध्यम से लोगों के कल्याण को बढ़ावा देना है। विलेन्स्की एवं लेबेआउक्स (1957:17) ने समाज कल्याण को उन औपचारिक रूप से संगठित और सामाजिक रूप से प्रायोजित संस्थापनों, संस्थाओं और कार्यक्रमों के रूप में परिभाषित किया है जो जनसंख्या के कुछ भाग या सभी की आर्थिक स्थिति, स्वास्थ्य या अन्तर्वैयक्तिक क्षमता में सुधार या संरक्षण के लिए कार्य करते हैं। फीडलेण्डर (1963:4) के अनुसार, "समाज कल्याण, सामाजिक सेवाओं एवं संस्थाओं की एक संगठित व्यवस्था है, जो व्यक्तियों एवं समूहों को एक संतोषजनक जीवन स्तर और स्वास्थ्य एवं व्यक्तिगत तथा सामाजिक सम्बन्धों को प्राप्त करने, जो उन्हें अपनी पूर्ण योग्यताओं को विकसित करने और उनको अपने परिवार और समुदाय की आवश्यकताओं के सामंजस्य के साथ उनके कल्याण को बढ़ावा देने की अनुमति देता है, के लिए सहायता

देने हेतु नियोजित की जाती है।" विलेन्सकी एवं लेबेआउक्स (1965:11–19) के मत में : "आज समाज कल्याण की दो धारणाएं प्रभावी प्रतीत होती हैं अवशिष्ट सम्पत्ति सम्बन्धी और संस्था सम्बन्धी। पहला इस बात को अधिकार में रखता है कि समाज कल्याण संस्थायें उसी समय व्यवहार में आनी चाहिये जब पूर्ति की सामान्य संरचनायें, परिवार और बाजार, नष्ट हो जायें। इसके विपरीत, दूसरा कल्याण सेवाओं को आधुनिक औद्योगिक समाज के "अग्रिम पंक्ति" के कार्यों के सामान्य रूप में देखता है, वे मुख्य लक्षण जो, साथ–साथ होने पर, समाज कल्याण संरचना को पृथक – पृथक करते हैं, वे हैं:

1) औपचारिक संगठन।

2) सामाजिक प्रायोजकता और उत्तरदायित्व।

3) प्रमुख कार्यक्रम प्रयोजन के रूप में लाभ के प्रेरक की अनुपस्थिति।

4) कार्यात्मक सामान्यीकरण: मानवीय आवश्यकताओं की खण्डात्मक की अपेक्षा एकीकृत दृष्टि।

5) मानवीय उपभोग की आवश्यकताओं पर प्रत्यक्ष केन्द्रित ।

"एक व्यापक अर्थ में समाज कल्याण," जैसा कि स्किडमोर, थैकरे और फार्ले (1991:3–4) ने व्यक्त किया है, "बड़ी संख्या में लोगों के, उनकी शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, आध्यात्मिक और आर्थिक आवश्यकताओं सहित, कल्याण और रूचियों को परिवृत करता है ..... समाज कल्याण में सामाजिक समस्याओं का सामना करने और उनका समाधान करने से सम्बन्धित आधारभूत संस्थायें और प्रक्रियायें सम्मिलित हैं।" समाज कल्याण के लक्ष्य पर प्रकाश डालते हुए जास्त्रो (1978:3) ने कहा है:" समाज कल्याण का लक्ष्य एक समाज में सभी व्यक्तियों की सामाजिक, वित्तीय, स्वास्थ्य सम्बन्धी और मनोरंजनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। समाज कल्याण अमीरों और गरीबों दोनों के, सभी आयु समूहों के लोगों की सामाजिक क्रियाशीलता को बढ़ाने का उपाय खोजता है। जब कभी हमारे समाज में अन्य संस्थायें जैसे– बाजार अर्थव्यवस्था तथा परिवार ,व्यक्तियों या लोगों के समूहों की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असफल हो जाती है, तब सामाजिक सेवाओं की आवश्यकता और माँग होती है।"

देश में केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद् की प्रथम सभापति दुर्गाबाई देशमुख (1960:) ने सुस्पष्ट रूप से कहा है कि :" समाज कल्याण की अवधारणा अन्य सामान्य सामाजिक सेवाओं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य इत्यादि से भिन्न है। समाज कल्याण जनसंख्या के कमजोर

तथा स्वतंत्रता, शालीनता और प्रतिष्ठा के साथ जीवन निर्वाह करने की स्थिति में नहीं होंगे, इस पर स्वयं को छोड़ दिया है, के हितों के संरक्षण और बढ़ावा देने का लक्ष्य रखने वाली सेवाओं और संस्थाओं की विशेष रूप से नियोजित व्यवस्था के रूप में परिभाषित कर सकते हैं।

समाज कल्याण की प्रमुख विशेषताएँ है:

1) यह सेवाओं और संस्थाओं की एक सोद्देश्यपूर्वक संगठित व्यवस्था है।

2) ये सेवाएँ और संगठन समाज के कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं के लिए विशेष रूप से प्रबन्ध करते हैं।

3) इन वर्गों की दुर्बलता और भेद्यता अद्भुत हो सकती है उसके सदस्य लोगों की किसी व्यक्तिगत गलती से नहीं बल्कि विभिन्न प्रकार की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और नैतिक प्रतिबन्धों से जिससे सामना हुआ हो सकता है और वे प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुए हों ।

4) समाज कल्याण का लक्ष्य इन वर्गों को समाज में उनके लिए एक प्रतिष्ठित स्थान को सँवारने और स्थिति जिसका सम्भवतः वे अधिभोग करें, के कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को प्रभावपूर्ण रूप से निर्वहन करने हेतु उनके पास जो कुछ भी शक्तियाँ, प्रतिभायें तथा योग्यतायें हैं उनकी अनुकूल रूप से अनुभूति करने के लिए उन्हें समर्थ करने हेतु उनके हितों का संरक्षण करना और उन्हें बढ़ावा देना है।

सामाजिक न्याय और सामाजिक नीति

सामाजिक न्याय

न्याय शब्द की कोई निश्चित परिभाषा नहीं दी गयी है। डायस (1985:65–66) ने ठीक ही कहा है न्याय शब्द एक मस्तिष्क द्वारा समाविष्ट करने के लिए अत्यधिक व्यापक है। कृष्णमूर्थी (1982:18) ने भी विचार व्यक्त किया है। श्रेष्ठ प्रयासों के बावजूद, न्याय को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना सम्भव नहीं है। यद्यपि सम्पूर्ण मानव इतिहास में प्रत्येक समाज के पास न्याय के प्रशासन के लिए व्यवस्था थी परन्तु इसकी प्रकृति और स्वरूप इसी प्रकार प्रशासन की पद्धतियाँ और ढंग भिन्न थे, जो कि एक समाज विशेष में एक समय की विशेष परिस्थिति में प्रचलित मूल्यों और प्रतिमानों पर निर्भर होते थे। प्रत्येक समाज लोगों के सामाजिक रूप से स्वीकृत अधिकारों के संरक्षण करने और बढ़ावा देने के लिए कुछ पद्धतियों का विकास करता है। ये पद्धतियाँ, स्पष्ट रूप से दो प्रकार के उपागमों द्वारा विशिष्ट गुण युक्त कही जाती है : (1) संरक्षात्मक (2) प्रोत्साहक। संरक्षात्मक उपागम लोगों

की दुर्व्यवहार तथा शोषण के विरूद्ध सुरक्षा करता है और प्रोत्साहक उपागम समाज में इस प्रकार की स्थितियों को उत्पन्न करता है जो कि स्वाभाविक रूप से समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व को सुनिश्चित कर सके और वह जो कुछ कारण (णों) से पिछड़ गये हैं और मुख्य धारा से बाहर हैं के लिए विशेष अवसरों की व्यवस्था कर सके।

अरस्तू ने न्याय को "अन्तरात्मा के फैलाव के उत्कर्ष जिसके लिए कि प्रत्येक व्यक्ति पात्र है," के रूप में परिभाषित किया है। सिसरो के अनुसार, इसकी उत्पत्ति अनादि–अनंत और अपरिवर्तनीय नैतिकता के दैवी सिद्धान्त में खोजी जा सकती है। न्याय लोगों के बीच पवित्रता को उत्पन्न करता है। न्याय ईश्वर का स्वाभाविक गुण है। यह लोगों के कल्याण को बढावा देने हेतु अनिवार्य कुछ निश्चित नैतिक नियमें का नाम है। अतः लोग, समाज के सांसारिक मामलों के संचालन करने के लिए अन्य निर्मित नियम संहिताओं की तुलना में न्याय के साथ वृहत्तर सार्थकता से जुड़े होने के लिए कर्तव्य–प्रतिबन्धित हैं। समाज में लोगों के प्रति न्याय,ईश्वर के प्रति पवित्रता के बराबर मानी जाती है। यह व्यवहार में सत्य है। इस प्रकार न्याय में सभी नैतिक गुण जो कि नैतिक रूप से विहित आचरण के नियमों के साथ अनुरूपता को सुनिश्चित करते हैं सम्मिलित हैं। अन्तिम विश्लेषण में, न्याय, अन्याय करने से दूर रहने के लिए कायम रहता है। आज 'न्याय' शब्द दो अर्थों में प्रयोग किया जाता है: (1) सार अर्थ (2) ठोस अर्थ। इसके सार अर्थ में यह एक कानूनी और नैतिक, आचरण के नियम की ओर संकेत करता है जो लोगों के कल्याण को बढ़ावा देता है।

इसके ठोस अर्थ में, यह विद्यमान कानूनों के विश्वसनीय कार्यान्वयन की ओर निर्देशित करता है। परम्परागत रूप से, न्याय का अर्थ है नैतिक गुण जिसके द्वारा हम प्रत्येक व्यक्ति को उसे अनिष्ट या हानि का सामना करने के रूप में क्या देय है, प्रदान करते हैं। आज इसका अर्थ है अधिकारों का संरक्षण, लोग जिसका उपभोग करने के लिए हकदार हैं।

न्याय किसी सभ्य समाज का प्रमाण चिन्ह है। न्याय को हर कीमत पर किया जाना चाहिये। फिआत जस्टिसिआ रूआत कोलेअम (आसमान भले ही गिर जाये, परन्तु न्याय अवश्य किया जाना चाहिये) निर्देशक सिद्धान्त है जिसका सभी सभ्य समाजों द्वारा अनुसरण किया जाता है।

न्याय का अत्यधिक सामाजिक महत्व है। यह कर्तव्य बोध और दूसरों के प्रति लगाव को बढ़ाता है। यह लोगों के बीच विश्वास और दृढ़ता को उत्पन्न करता है और कायम रखता है। यह कानून और व्यवस्था को बनाये रखता है।यह बोध शक्ति को बढ़ावा देता है और उसके द्वारा सामंजस्य और एकीकरण को प्रोत्साहन देता है। यह एकता और परस्पर

निर्भरता को पुष्ट करता है। यह एक शान्ति और स्तब्धता के एक वातावरण को निर्मित करता है। यह जियो और जीने दो या शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व के सिद्धान्त को रेखांकित करता है। यह सामाजिक आर्थिक विकास की गति बढ़ाता है, और अन्तिम रूप से व्यक्तिगत और सामाजिक क्रियाशीलता के प्रति आशा रखता है।

सामाजिक न्याय, न्याय की सम्पूर्ण रूपरेखा का एक भाग है, जो अपने विस्तार क्षेत्र के अन्तर्गत 'न्यायपूर्ण वितरण' के विचार को अन्तर्निहित करता है और एक न्याय के समाज को उत्पन्न करने के उद्देश्य हेतु सुविधाओं के 'समान वितरण' को अन्तर्निहित नहीं करता। मिलर (1967:1) ने ठीक ही कहा है "सामाजिक न्याय की अवधारणा को सामान्यतः न्याय की व्यापक अवधारणा के एक भाग को निर्मित करने के रूप में सबसे अच्छी तरह समझा जा सकता है।न्याय के एक विशेष प्रकार के रूप में, इसका अर्थ है सामाजिक रूप से क्या न्याय है और समय और स्थान के साथ – साथ सामाजिक रूप से न्याय में क्या परिवर्तन होता रहता है। ऐलेन (1950:3) ठीक ही कहते हैं, " आज हम सामाजिक न्याय के विषय में काफी सुनते हैं। मुझे विश्वास नहीं है कि वह जो इस शब्द का प्रयोग करते हैं, इससे उनका क्या अभिप्राय है, इस विषय में अत्यधिक सहज रूप से कम जानते हैं। कुछ का तात्पर्य सम्पत्ति का 'वितरण' या 'पुनर्वितरण', कुछ इसकी व्याख्या अवसरों की समानता के रूप में करते हैं— एक भ्रामक शब्द है क्योंकि लोगों के बीच जिनके पास इसे ग्रहण करने के लिए असमान क्षमतायें हैं, अवसर कभी समान नहीं हो सकते; बहुत साधारण रूप से मेरा अनुमान है कि यह अन्यायपूर्ण है कि कोई भी व्यक्ति उनकी तुलना में अधिक सौभाग्यशाली और अधिक बुद्धिमान हो सकता है और उसका अभिप्राय न्याय है— मैं वास्तव में उदार रूप से कहना चाहूँगा, कि प्रत्येक प्रयास कम से कम मानवीय असमानता की विषमताओं को कम करने के लिए किया जाना चाहिये और कोई बाधा प्रस्तुत नहीं की जानी चाहिये बल्कि वास्तव में स्वयं सुधार के लिए उपयोगी सहायता देनी चाहिये।

सामाजिक न्याय एक गतिशील शब्द है जो एक प्रजातांत्रिक समाज में 'कानून के नियम' के संरक्षण की व्यवस्था करता है। यह कानून की सहायता से विभिन्न प्रकार की असमानताओं को दूर करने के द्वारा एक न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की स्थापना में सहायता करता है और व्यक्तियों के अनुकूल व्यक्तित्व के विकास के लिए स्वतंत्रता को सुनिश्चित करता है। इसके पास संरचनात्मक और योजनाबद्ध असमानताओं के निराकरण के पक्ष में एक नीति होती है क्योंकि सामाजिक न्याय के मूल में समाज के कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों के लिए विशेष अवसरों की व्यवस्था करने के द्वारा, जो या तो सामाजिक दमन और उत्पीड़न से वशीकृत होने के कारण या विभिन्न प्रकार की

अयोग्यताओं और प्रतिबन्धों के शिकार होने के कारण, दुरूपयोग के लिए और यहाँ तक कि दुर्व्यवहार तथा शोषण के लिए तत्पर हैं, आधारभूत धारणा समकरण करना है। उन्हें उनके हाल पर छोड़ दिये जाने पर वे समाज की मुख्य धारा का भाग होने में सक्षम नहीं होंगे। अपने संकुचित अर्थ में, सामाजिक न्याय की अभिव्यक्ति का तात्पर्य लोगों के व्यक्तिगत सम्बन्धों में अन्याय का संशोधन करना है और व्यापक रूप से यह लोगों के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन में असन्तुलन के निराकरण से सम्बन्ध रखता है।

जस्टिस कृष्णा अय्यर ने (1980:157–158) के अनुसार, " सामाजिक न्याय एक उदार अवधारणा है जो समाज के प्रत्येक सदस्य को एक निष्पक्ष व्यवहार का आश्वासन प्रदान करता है। यदि एक सदस्य द्वारा कोई उपचारात्मक क्षति, अन्याय या अयोग्यता या असमर्थता की पीड़ा सहन की जाती है जिसके लिए वह प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी नहीं है, सामाजिक न्याय के उदार लक्ष्यार्थों के अन्तर्गत स्थान पाता है।"सामाजिक न्याय की अवधारणा इसके विस्तार क्षेत्र के अन्तर्गत समाज में सर्वत्र केवल साधनों, सुविधाओं, बोझों, इत्यादि के वितरण ही नहीं जो कि इसकी प्रमुख सामाजिक संस्थाओं से परिणत होता है, (मिलर,1972:22) बल्कि एक समाज में व्यक्तियों के जैविक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास (गोविन्द,1995:6) को भी सम्मिलित करने के लिए पर्याप्त रूप से व्यापक है। जस्टिज कृष्णा अयर (1980) निश्चित रूप से सही हैं जबकि उन्होंने कहा है कि :"सामाजिक न्याय सीमित [illegible] नहीं है बल्कि, इसके विस्त त प्रवाह में, यह अधिकार जमाने वाले अन्याय का मुकाबला करता है और अत्यावश्यक विशेषाधिकारों को प्रयत्नपूर्वक प्राप्त करता है, दमन को ठीक करता है तथा मनुष्यों को उनकी सम्पूर्णता और आध्यात्मिक स्पर्श के साथ थोड़ा सा परिवर्तित एकाधिक रणनीतियों के माध्यम से अभीभूत करता है, अस्वस्थ मानवता के लिए केवल कल्याणकारी आशा को प्रस्तुत करता है।

भारत जैसे विकासशील देश बेरोजगारी, गरीबी, अशिक्षा, खराब–स्वास्थ्य और गन्दगी की स्पष्ट रूप से व्यापक और गम्भीर समस्याओं द्वारा विशिष्ट गुणयुक्त हैं, लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने की वचनबद्धता पर डटे हैं (उदाहरण के लिए, भारतीय संविधान का अनुच्छेद 38 स्पष्ट रूप से रूपरेखा प्रस्तुत करता है: "राज्य उतने प्रभावपूर्ण ढंग से जैसे कि यह कर सकता है एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना और संरक्षण द्वारा लोगों के कल्याण के प्रोत्साहन हेतु प्रयास करेगा जिसमें राष्ट्रीय जीवन की संस्थाओं में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय लाया जायेगा)" लोगों के सशक्तीकरण या क्षमता निर्माण के लिए अनिवार्य न्यूनतम आवश्यकताओं की सन्तुष्टि की जानी चाहिये; प्रत्येक व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास के लिए अवसरों और समाज के अल्प सुविधा प्राप्त वर्गों के सदस्य लोगों, उनकी किसी गलती के कारण नहीं बल्कि, असमतावादी और अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के

कारण जो कि उन्हें सामाजिक सोपानिकी में आरोपण के रूप में आधारित अत्यधिक निम्न सामाजिक स्तर प्रदान करता है, के लिए विशेष सुविधायें, दी जानी चाहिये।

सामाजिक न्याय शब्द जैसा कि यहाँ प्रयोग किया गया है, समाज द्वारा जिसकी सामाजिक व्यवस्था है, एक सोद्देश्यपूर्वक प्रस्तुत वैमनस्यकारी व्यवस्था के माध्यम से जिसके द्वारा समाज के कुछ निश्चित वर्ग उत्पीड़न, दमन, उपेक्षा और यहाँ तक कि बहिष्कार से वशीभूत होते हैं और विपत्तियों का एक जीवन जीने और एक निम्न स्तर पर कष्ट सहने के लिए बाध्य होते हैं, इस प्रकार के विशेष संरक्षात्मक, उपचारात्मक, सुधारात्मक और प्रोत्साहक मानक जो कि उनकी विशेष असमर्थताओं को दूर करने तथा एक सुसभ्य, प्रतिष्ठित, उन्मुक्त और आदरपूर्ण जीवन जो समानता, स्वतंत्रता और बन्धुत्व द्वारा विशेष गुण–युक्त हो के लिए आगे बढ़ने हेतु उन्हें समर्थ करने में सहायक हो सकते हैं, के अंगीकार करने से सम्बन्धित होता है।

सामाजिक न्याय का सामान्य लक्ष्य समाज के न्याय और सुव्यवस्थित क्रियाशीलता, लोगों के अंशदानों के हकदार होने और आवश्यकताओं के अनुसार सुविधाओं के वितरण और उनके समाज के लिए विचलन और हानि उत्पन्न करने की गम्भीरता के अनुसार दण्ड के अधिरोपण को सुनिश्चित करना है।

सामाजिक न्याय के विशिष्ट उद्देश्य हैं:

1) यह सुनिश्चित करना कि 'कानून के नियम' समाज में प्रचलित है।
2) 'अवसरों की समानता' का आश्वासन प्रदान करना।
3) कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों के लिए विशेष अवसरों की व्यवस्था करना।
4) परिणामों की समानता को सुनिश्चित करना।
5) कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों के दुर्व्यवहार और शोषण का निवारण करना।
6) अल्पसंख्यकों के धर्म और संस्कृति की रक्षा करना और उन्हें सार्वजनिक व्यवस्था और शान्ति को जोखिम में डाले बिना उसके अनुसरण करने और प्रचार करने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करना।

विश्व के किसी भी भाग में, जहाँ कहीं भी जाति, रंग या मत के नाम पर विभेदीकरण, दुर्व्यवहार और शोषण विद्यमान होता है, साथ ही सामाजिक न्याय के लिए कुछ प्रकार की व्यवस्था भी अस्तित्व में होती है। यहाँ तक कि विश्व के सबसे विकसित देश, संयुक्त राज्य अमेरिका, में अश्वेतों और आदिवासियों के विकास के लिए विशेष अवसरों के रूप में सकारात्मक क्रिया की एक व्यवस्था विद्यमान है। भारत में, इसके स्तरीकरण की व्यवस्था

जाति के रूप में प्रसिद्ध है, भारतीय संविधान के लागू होने के समय से ही अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों को विशेष सुविधायें दी जाती हैं। समय के यथाक्रम में, वे सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े समुदायों में भी प्रवर्धित हुए, जो कि वर्तमान में 'अन्य पिछड़े वर्गों' के रूप में प्रसिद्ध हैं। अब विभिन्न पदासीन राजनीतिक दल – कुछ राज्यों में और कुछ केन्द्र में, आने वाले चुनावों में कुछ लाभ पाने के उद्देश्य से आर्थिक रूप से पिछड़ी उच्च जातियों और मुस्लिमों के लिए सामाजिक न्याय की सुविधा को बढ़ाने के लिए एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं।

सामाजिक नीति

नीति, स्पष्ट रूप से, एक रूपरेखा जिसके अन्तर्गत एक निश्चित कार्य विधि को अपनाने के द्वारा जिसके दृढ़ उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है, से सम्बन्धित होती है। वेबस्टर्स इनसाइक्लोपेडिक अनएब्रिज्ड डिक्शनरी (1996:1113) ने नीति को "वांक्षनीयता, सुविधा इत्यादि के लिए एक निश्चित कार्य विधि के अंगीकृत करने के रूप परिभाषित किया है ..... एक कार्य – विधि को एक सरकार, शासक, राजनीतिक दल इत्यादि के द्वारा अपनाया और अनुसरण किया जाता it:...कार्य या प्रक्रिया विवेक या वांक्षनीयता के अनुकूल होती है या उसके सन्दर्भ में समझी जाती है।" सामाजिक नीति शब्द प्रायः स्वच्छन्द रूप से और अस्पष्ट रूप से प्रयोग किया जाता है। आइडेन (1969:5) ने कहा है कि, " सामाजिक नीति को सरकार द्वारा अपनायी गयी उन कार्य–विधियों सहित के रूप में ग्रहण किया जाता है जो जीवन, कार्य के सामाजिक पहलुओं से सम्बन्धित हैं और जो इसके नागरिकों के कल्याण को उन्नत करने के लिए सोद्येश्यपूर्वक नियोजित और ग्रहण की गयी हैं।" कुलकर्णी (1987:94) के शब्दों में, " महत्वपूर्ण शब्द 'नीति' इच्छित उद्देश्य(यों) की प्राप्ति के प्रयोजन से एक दूरदर्शी कार्य – विधि को अन्तर्निहित करता है, ... क्या व्यवहारिक है, नीति कहलाता है और क्या सिद्धान्तों पर आधारित है यह सिद्धान्तावादी के रूप में, से सम्बन्धित होता है" इसके अतिरिक्त एक अन्य जगह उन्होंने (1978:15) लिखा है कि, "सामाजिक नीति" शब्द तीन विशिष्ट क्षेत्रों या पहलुओं को सूचित करने हेतु प्रयोग किया जाता है, जो कि विख्यात हैः (1) राज्य की नीतियों के सामाजिक उद्देश्य,उनकी आर्थिक वृद्धि सहित (2) एक विकासशील अर्थव्यवस्था के एक सम्पूर्ण भाग के रूप में सामाजिक सेवाओं को प्रोत्साहन देने सम्बन्धी नीति (3) विकास योजनाओं के एक भाग के रूप में समाज कल्याण सेवाओं के प्रोत्साहन के संचालन की नीति।"

इस प्रकार सामाजिक नीति का तात्पर्य है एक रूपरेखा जिसके अन्तर्गत या निश्चित कार्य – विधि को अपनाने के द्वारा जिसे राज्य इसके मामलों को संचालित करने हेतु समाज के हितों, इसी प्रकार लोगों के इच्छित मानवाधिकारों के संरक्षक और प्रोत्साहक के रूप में

हितों, इसी प्रकार लोगों के इच्छित मानवाधिकारों के संरक्षक और प्रोत्साहक के रूप में ताकि पोषण, जल–वितरण, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, नियोजन और मनोरंजन इत्यादि के विभिन्न क्षेत्रों में सेवाओं के एक अनुक्रम की व्यवस्था के द्वारा सभी के कल्याण के लक्ष्य को बढ़ाया जा सके।

सामाजिक नीति की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित प्रकार से है:

1) सामाजिक नीति, समाज के मामलों को संचालित करने के लिए राज्य के उत्तरदायित्वों की नीति है।

2) यह एक रूपरेखा जिसके अन्तर्गत और कार्य विधि को अपनाने के द्वारा जो समाज के मामलों को संचालित करने हेतु है, को व्यक्त करती है।

3) यह लोगों को सामाजिक सेवाओं की व्यवस्था के साथ जो उनकी प्रकृति से प्रत्यक्ष और सामान्य हैं, इसके साथ सामान्य रूप से और लगाव रखने के लिए जोड़ती है।

4) इसका लक्ष्य मानवीय और सामाजिक विकास को बढ़ावा देना है।

यहाँ सामाजिक नीति और समाज कल्याण के बीच एक सूक्ष्म भेद स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। जबकि, सामाजिक नीति स्वयं को सामान्य रूप से लोगों के जीवन और निर्वाह को प्रभावित करने हेतु सामाजिक सेवाओं के प्रावधान से सम्बन्धित करती है, समाज कल्याण नीति स्वयं को समाज के कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों को अन्य वर्गों के साथ उनकी तरह बनने के लिए समर्थ करने हेतु विशेष रूप से नियोजित समाज कल्याण सेवाओं के संगठन से जोड़ती है।

सामाजिक नीति का क्षेत्र स्पष्ट रूप से व्यापक है। यह अपनी सीमा के अन्तर्गत इस प्रकार की सभी सेवाओं जो कि एक समाज में लोगों की जीवन–निर्वाह व्यवस्था पर प्रत्यक्ष रूप से कार्य करता हैं और विभिन्न प्रकार के सम्बन्धित मामले जो इस प्रकार की सेवाओं पर कार्य कर सकते हैं, को सम्मिलित करती है।

जैसा कि कुलकर्णी (1987:94) द्वारा कहा गया है, "परिवर्तित और परिवर्तन हो रही आवश्यकताओं और समस्याओं के अनुकूल होने हेतु तथा सामान्य रूप से समान अवसर के एक खुले, बहुलवादी समाज के प्रति कार्य करने के लिए, समाज का आधुनिकीकरण, विज्ञान और प्रौद्योगिकी को अपनाने को समाविष्ट करना, राष्ट्रीय जीवन स्तर को ऊपर उठाना, नागर एवं राजनीतिक संस्थाओं को उन्नत करना, ये सभी घटक सामाजिक नीति के सार और विषय – वस्तु के रूप में समझे जा सकते हैं।"

सामाजिक नीति के आधारभूत स्रोत किसी देश के संविधान और उसके अधीन निर्मित विभिन्न प्रकार के अधिनियमन हैं क्योंकि संविधान एक फव्वारे के शीर्ष के समान कार्य करता है जिससे सभी निर्देश प्रवाहित होते हैं जिसके प्रकाश में विशिष्ट कानून मानवीय और सामाजिक विकास को समुचित बढ़ावा देने के लिए अधिनियमित किये गये हैं।

भारत में सामाजिक नीति संविधान के भाग IV में राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों को शीर्षक में विशिष्ट रूप से स्पष्ट शब्दों में प्रज्ञापित की गयी है। इसमें विशिष्ट अनुच्छेद जैसे 38 और 46 हैं जो कि सामाजिक न्याय की सम्पूर्ण रूपरेखा के अन्तर्गत लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए व्यवस्था करते हैं। यहाँ यह विचारणीय है कि 1991 के पश्चात् भारत सरकार की सामाजिक और समाज कल्याण नीति में प्रबल परिवर्तन आया है— यह वर्ष जिसमें संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम के भाग के रूप में उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीकरण की नीति को अंगीकृत किया गया।

समाज कार्य और सामाजिक क्रिया

समाज कार्य

समाज कार्य जो कि एक व्यवस्थित ढंग से असहायों को राहत का प्रबन्ध करने की आवश्यकता के रूप में उद्गमित हुआ है, क्रमिक रूप से, आवश्यकता ग्रस्त लोगों के लिए सहायता की प्रभावी व्यवस्था हेतु विशेषज्ञ ज्ञान और तकनीकी कौशल के साथ एक अर्द्ध – व्यवसाय या व्यवसाय के रूप में विकसित हुआ है। प्रारम्भिक अवस्था में यह लोगों को उनकी मनो सामाजिक समस्याओं जो कि उनकी प्रभावी सामाजिक क्रियाशीलता को अवरूद्ध करती हैं के समाधान हेतु सहायता करने से सम्बन्धित था। काल के यथाक्रम में यह महसूस किया गया कि सामाजिक जीवन चूँकि व्यावहारिक धरातल पर संचालित होते हैं, उसके तीन पृथक और विचारणीय स्तर व्यक्ति, समूह और समुदाय, थे। वहाँ व्यक्तियों के साथ कार्य करने के लिए वैयक्तिक समाज कार्य, समूह के साथ कार्य करने के लिए सामाजिक समूहिक कार्य और समुदाय के साथ कार्य करने के लिए सामुदायिक संगठन की तीन भिन्न पद्धतियों के विकास द्वारा उनके साथ पृथक रूप से कार्य करने की आवश्यकता थी। काल के यथाक्रम में, इन्हें समाज कार्य की तीन प्राथमिक पद्धतियों के रूप में स्वीकृति प्राप्त हो गयी। यह भी महसूस किया गया कि इन तीन पद्धतियों के उपयोग के द्वारा समाज कार्य सहायता प्रदान करने के दौरान, हमेशा कुछ सामाजिक सेवाओं/समाज कल्याण सेवाओं का प्रबन्ध करने और प्रमाणिक ज्ञान को संग्रहीत करने की एक आवश्यकता थी, और अन्ततः यह अनुभूति समाज कार्य की दो गौण /सहायक पद्धतियों, जो कि समाज कल्याण प्रशासन और समाज कार्य शोध के नाम से विख्यात हुई, के विकास के साथ चरम बिन्दु पर पहुँच गयी। काल के यथाक्रम में, यह गम्भीर रूप से

अनुभव किया गया कि चूँकि मनो–सामाजिक समस्याओं की जड़ें दोषपूर्ण सामाजिक संरचना और व्यवस्था में हैं और इन समस्याओं का सामना करने वाला कोई सेवार्थी अपनी समस्याओं के लिए उत्तरदायित्व की रक्षा नहीं कर सकता, अतः समाज कार्य के शस्त्रागार में कुछ अस्त्रों को विकसित करने और सम्मिलित करने की आवश्यकता थी जो कि समाज में इच्छित परिवर्तनों को उत्पन्न करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह कर सके, और इस प्रकार समाज कार्य की एक सहायक/द्वितीयक पद्धति के रूप में सामाजिक क्रिया का उद्गमन हुआ।

यह देखते हुए कि सामाजिक वास्तविकता के विभिन्न आयाम अभिभाज्य हैं समाज सेवाओं में अनवरत रूप से शोध कार्य स्थापित किये जा चुके हैं, सामाजिक वास्तविकता को एक एकीकृत समग्र के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिये। परिणाम – स्वरूप, समाज कार्यकर्ता भी इसकी प्राथमिक और द्वितीयक पद्धतियों के पृथक अभ्यास के एकीकरण करने के विषय में विचार करते हैं और आज परिस्थिति विषयक आवश्यकताओं के अनुसार सभी छः पद्धतियों के प्रयोग को सम्मिलित करते हुए समाज कार्य के एकीकृत अभ्यास का विचार अच्छी तरह स्वीकृत है।

समाज कार्य क्या है को समझने के उद्देश्य से समय–समय पर दी गयी कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाओं को प्रस्तुत करना अनिवार्य प्रतीत होता है।

डा0 अब्राहम फलेक्सनर (1915) समाज कार्य "समुदाय में जीवन निर्वाह या कार्य की परिस्थितियों में सुधार हेतु, या विपत्ति या तो चरित्र की दुर्बलता के कारण या फिर वाह्य परिस्थितियों के दबाव के कारण, से राहत देने, कम करने या निवारण करने हेतु चिरस्थायी और सुविचारित प्रयास का कोई ढंग है। इस प्रकार के सभी प्रयास दान, शिक्षा या न्याय के प्रमुख विषयों के अन्तर्गत स्थान पाने के रूप में कदाचित समझे जा सकते हैं, और वही कार्य कभी – कभी दृष्टिकोण के अनुसार एक या अन्य के रूप में दृष्टिगोचर हो सकते हैं।"

चेनी (1926) ने समाज कार्य में उन सभी "स्वैच्छिक प्रयासों को सम्मिलित किया है जिनका उद्देश्य उन आवश्यकताओं की सन्तुष्टि करना है, जिनका सम्बन्ध सामाजिक सम्बन्धों से है और जो वैज्ञानिक ज्ञान और वैज्ञानिक प्रणालियों का प्रयोग करते है।"

हेलेन एल0 विल्मर (1942:121) ने विचार व्यक्त किया है "समाज कार्य का प्रमुख कार्य व्यक्तियों को एक संगठित समूह की सेवाओं के उनके द्वारा प्रयोग या एक संगठित

समूह के एक सदस्य के रूप में उनके निष्पादन मे उनके द्वारा सामना करने वाली कठिनाइयों के विषय में सहायता प्रदान करना है।"

अर्थर ई0 फिंक (1942:2)के अनुसार" समाज कार्य सेवाओं की एक ऐसी व्यवस्था है जो व्यक्तियों को अकेले या समूहों में, ऐसी वर्तमान या भविष्य में आने वाली सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक बाधाओं से निपटने में सहायता प्रदान करता है जो उन्हें समाज मे पूरी या प्रभावशाली सहभागिता करने से रोकती है।"

हडसन खिन्दुका मे उल्लिखित, (1962:4) के अनुसार, समाज कार्य "एक सेवा का ढंग है जो कि एक ओर, व्यक्ति या परिवार समूह को अस्तित्व के अभियान मे अधिक व्यवस्थित रूप से लय प्राप्त करने हेतु, जो पायदान से बाहर है, सहायता देने के लिए और दूसरे जहाँ तक सम्भव हो, उन व्यवधानों को दूर करने, जो दूसरों को जिसके लिए वे समर्थ है की श्रेष्ठ प्राप्ति करने से रोकते हैं, के लिए प्रयास करता है।"

जे0 पी0 ऐण्डरसन (1945) कहते है: "समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है जिसका उद्देश्य लोगों की व्यक्तिगत या समूह रूप में सहायता करना है,जिससे कि वे अपनी विशेष इच्छाओं या योग्यताओं के अनुसार और सामाजिक इच्छाओं और योग्यताओं के अनुरूप सन्तोषजनक सम्बन्ध एवं जीवन स्तर प्राप्त कर सकें।"

हेलेन आई0 क्लार्क (1945:16) ने कहा है" समाज कार्य व्यावसायिक सेवा का एक ढंग है जिसका आधार ज्ञान एवं निपुणताओं के ऐसे मिश्रण पर है जिसका कुछ भाग समाज कार्य का विशेष भाग है और कुछ भाग समाज कार्य का विशेष भाग नहीं है और जो एक ओर सामाजिक पर्यावरण में आवश्यकताओं की सन्तुष्टि करने मे व्यक्ति की सहायता करने का प्रयास करता है और दूसरी ओर इस बात का प्रयत्न करता है कि जहाँ तक सम्भव हो उन बाधाओं को दूर किया जा सके जो लोगों को सर्वोत्तम विकास से, जिसके वे योग्य है रोकती है।"

डब्ल्यू0 ए0 फ्रीडलेण्डर (1963:4) की राय मे " समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है, जो वैज्ञानिक ज्ञान और मानव सम्बन्धों की निपुणता पर आधारित है। यह व्यक्तियों की अकेले या समूह में सहायता करता है जिससे कि वे सामाजिक एवं व्यक्तिगत संतुष्टि एवं स्वतंत्रता प्राप्त कर सकें।"

बोएम (1959:54) ने समाज कार्य शिक्षा परिषद् द्वारा प्रायोजित पाठ्यचर्या अध्ययन में विचार व्यक्त किया है कि"समाज कार्य व्यक्तियों की एकल रूप से या समूह में, सामाजिक

क्रियाशीलता में वृद्धि करने के लिए ऐसी प्रक्रियाओं का प्रयोग करता है जिनका सम्बन्ध मनुष्य और उसके पर्यावरण के बीच परस्पर सम्बन्धी क्रियाओं से है। इन क्रियाओं को तीन कार्यों में विभाजित किया जा सकता है। विकृत क्षमता की पुनः स्थापना, वैयक्तिक एवं सामाजिक साधनों की व्यवस्था तथा सामाजिक अक्रमण्यता का निवारण।"

ऊपर दी गयी परिभाषाओं का एक अवलोकन स्पष्ट रूप से संकेत करता है कि समाज कार्य को परिभाषित करना कठिन है परन्तु इसके सेवा से लेकर व्यावसायिक सेवा तक के ऐतिहासिक विकास और सामाजिक व्यवस्था को परिवर्तित करने हेतु आवश्यकताग्रस्त लोगों की सहायता से इसकी सम्बद्धता को ध्यान में रखते हुए, हम समाज कार्य को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित कर सकते है:

"समाज कार्य एक विशिष्ट प्रकार का कार्य है–जो आवश्यकताग्रस्त लोगों को उनकी सामाजिक भूमिकाओं को प्रभावपूर्ण रूप से सम्पादित करने और विशेष रूप से व्यक्तित्व और सामाजिक संरचना में आवश्यक परिवर्तनों को लाने के द्वारा एक मुक्त, सुसभ्य और गौरवशाली ढंग से जीवन निर्वाह करने हेतु उनकी क्षमताओं की अनुकूलम अनुभूति के लिए उन्हें सम्मर्थ करने हेतु सहायता प्रदान करने के लिए मानवीय और प्रजातान्त्रिक दृष्टिकोण के साथ वैज्ञानिक ज्ञान और तकनीकी कुशलताओं के प्रयोग द्वारा अवैतनिक या वैतनिक रूप से सम्पन्न किया जाता है।"

समाज कार्य की महत्वपूर्ण विशेषताएं जैसी कि आज ये विद्यमान हैं, विशेष रूप से भारत में जिसके समाज सेवा की महत्वपूर्ण परम्परा रही है, निम्नलिखित प्रकार से है।

1) समाज कार्य एक विशिष्ट प्रकार का कार्य है।

2) यह कार्य उन व्यक्तियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है जो कि इस कार्य को करने के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित हैं।

3) समाज कार्य के लिए शिक्षा/प्रशिक्षण समाज कार्यकर्ताओं को कुछ विशिष्ट प्रकार के वैज्ञानिक ज्ञान और तकनीकी कुशलताओं से लैस करता है और उनके बीच एक प्रजातान्त्रिक और मानवीय दृष्टिकोण तथा दिशा का विकास करता है।

4) समाज कार्य जिन समस्याओं के साथ कार्य करता है उनकी प्रकृति और उनके मूल कारणों के अनुसार आवश्यक रणनीति को अपनाता है जो कि एक समस्या का सामना करने वाले व्यक्ति की व्यक्तित्व संरचना में या जिस गैर समतावादी और अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का वह भाग है, में विद्यमान हो सकते हैं।

5) समाज कार्य में प्रयुक्त रणनीति समस्या का सामना कर रहे व्यक्ति के व्यक्तित्व संरचना में परिवर्तन को ला सकती है और/या सामाजिक संरचना तथा व्यवस्था में रूपान्तरण को उत्पन्न कर सकती है।

6) समाज कार्य मानवीय और सामाजिक विकास को बढ़ावा देता है, मानवाधिकारों की पूर्ति को सुनिश्चित करता है तथा सामाजिक दायित्वों के अनुपालन का आश्वासन देता है–पारिवारिक सदस्यों, समुदाय में लोगों और कुल मिलाकर समाज के सदस्यों के प्रति दायित्व।

7) समाज कार्यकर्ता अपने द्वारा किये जाने वाले कार्य के लिए या तो उससे जो उन्हें नियुक्त करे अथवा उनसे काम ले या उससे जो उनके कार्य से लाभ प्राप्त करें, क्षतिपूर्ति स्वीकार कर सकते हैं (और प्रायः वह स्वीकार करते हैं)। कभी–कभी, परोपकार सम्बन्धी अनुचिन्तन के गतिमान होने पर कदाचित एक प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ता को पूर्ण रूप से एक अवैतनिक तरीके से सेवायें प्रदान करते देखा जा सकता है।

सामाजिक क्रिया

प्रत्येक व्यक्ति समाज में रहने के विशुद्ध कर्तव्य परायणता द्वारा और एक सामाजिक प्राणी होने के कारण,सामाजिक क्रिया में भाग लेता है। सामाजिक क्रिया की अवधारणा, प्रायः तीन घटकों के समावेश को कहा जाता है : (1) सामाजिक प्राणी (2) सामाजिक प्रकरण या परिस्थिति, और (3) प्रेरणा।

एक अवधारणा के रूप में यह समाजशास्त्र – समाज के विज्ञान में उत्पन्न हुआ है। क्रिया व्यवहार से भिन्न हो सकती है इस कारण से कि इसमें अभिप्राय या उद्देश्य सम्मिलित होता है। "समाज शास्त्र में सामाजिक क्रिया को कार्यवाहक लक्ष्यों, अपेक्षाओं और मूल्यों, उन लक्ष्यों की प्राप्ति के साधनों, परिस्थिति की प्रकृति तथा उस परिस्थिति के कार्यवाहक ज्ञान के निर्धारण द्वारा विशिष्ट परिस्थिति में विशिष्ट कार्यवाहक के विशेष ढंग से विश्लेषित किया गया है" (एम्बरकॉम्बी, हिल एवं टर्नर, 1986:14)। क्रिया सिद्धान्त के दो मुख्य प्रकार हैं। (1) व्याख्यात्मक, प्रत्यक्षवादी। व्याख्यात्मक सिद्धान्तकार जैसे शुट्ज उस क्रिया का अनुरक्षण करते हैं जिसका अपरिवर्तित रूप से अभिप्राय होता है। प्रत्यक्षवादी जैसे पार्सन, क्रिया को सामाजिक संरचना और समाजीकरण के विशेष ढंग से अन्तर्ग्रस्त द्वारा परिभाषित लक्ष्यों और साधनों के विशेष ढंग से व्याख्या करते हैं।

समाज कार्य में सामाजिक क्रिया, जिसको इसकी सहायक पद्धतियों में से एक माना जाता है वह समाजशास्त्र में इसके अस्तित्व से भिन्न है। सामाजिक क्रिया पर उपलब्ध साहित्य

का एक पुनर्विलोकन प्रदर्शित करता है कि सामाजिक क्रिया की अवधारणा पर कोई सर्वसम्मति नहीं है जो कि सामुदायिक संगठन, सामुदायिक कार्य और सामुदायिक क्रिया के साथ प्रायः संभ्रमित है। यह मेरी ई. रिचमण्ड थीं जिन्होंने 1922 में इस शब्द को प्रचार और सामाजिक विधान के माध्यम से जन साधारण के आन्दोलन के लिए प्रयुक्त किया। तब से, विभिन्न लेखकों द्वारा इस विषय पर अनेकों परिभाषायें दी गयी हैं। उनमें से कुछ विचारणीय निम्नलिखित प्रकार से हैं।

केनेथ एल. एन. प्रे (1945:348) : सामाजिक क्रिया उन मूलभूत सामाजिक दशाओं और समस्याओं को प्रभावित करने हेतु संचालित एक व्यवस्थित, चेतन प्रयास है जिससे सामाजिक समायोजन और कुसमायोजन की वह समस्यायें उत्पन्न होती हैं जिनके लिए समाज कार्यकर्ताओं के रूप में हमारी सेवायें संचालित की जाती हैं।"

एलिजाबेथ विकेन्डन (1956): "सामाजिक क्रिया एक ऐसा शब्द है जो उस समाज कल्याण क्रियाकलाप के उस पहलू पर लागू होता है जो उन सामाजिक संस्थाओं और समस्याओं को अनुकूल करने, संशोधन करने या अनुरक्षण करने की ओर निर्देशित होती हैं जो सामूहिक रूप से सामाजिक पर्यावरण बनाती हैं। सामाजिक क्रिया सामाजिक पर्यावरण के सतर्क समायोजन से सम्बन्धित होती है जिससे व्यक्तियों की मान्यता प्राप्त आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके और उन सम्बन्धों और समायोजनों जो इसकी स्वयं की श्रेष्ठ क्रियाशीलता के लिए आवश्यक हैं की सुविधा प्रदान की जा सके।"

अर्थर डनहम (1958:52): सामाजिक क्रिया को "सम्भवतः शिक्षा, प्रचार, अनुनय या दबाव के माध्यम से सामाजिक क्रिया करने वाले के द्वारा सामाजिक रूप से इच्छित विश्वस्त उद्देश्यों के पक्ष में वर्तमान सामाजिक व्यवहारों या परिस्थितियों में परिवर्तन लाने या परिवर्तन का प्रतिरोध करने के प्रयासों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"

डब्ल्यू० ए० फ्रीडलेण्डर (1963:218)"सामाजिक क्रिया समाज कार्य दर्शन और अभ्यास की रूपरेखा के अन्तर्गत, एक वैयक्तिक, सामूहिक या सामुदायिक प्रयास है जिसका लक्ष्य सामाजिक प्रगति की प्राप्ति, सामाजिक समस्याओं का संशोधन और सामाजिक विधान तथा स्वास्थ्य एवं कल्याण सेवाओं में सुधार करना है।"

के, के० जेकब (1965:63)"सामाजिक क्रिया अनिवार्य रूप से वह प्रयास है जिसका लक्ष्य सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों में सुधार और बेहतर सामाजिक पर्यावरण के लिए उपयुक्त परिवर्तनों और सुधारों की पहल करना है।"

एम0 वी0 मूर्ति (1968:217)"सामाजिक क्रिया, समाज कार्य का एक प्रविधि है जो सम्पूर्ण समुदाय या कम से कम इसके सदस्यों के एक बड़े भाग को, मुददों की असन्तोषजनक स्थिति के प्रति चेतना और प्रभावी समाधानों की अभिलाषा को उत्पन्न करती है।"

इस प्रकार सामाजिक क्रिया को सम्भवतः समाज कार्य की एक पद्धति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके अन्तर्गत कुछ सम्भ्रान्त व्यक्ति और/या लोगों के द्वारा स्वयं व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता के नेत त्व के अधीन व्यवस्था में परिवर्तन उत्पन्न करने के लिए सचेतन, व्यवस्थित तथा संगठित प्रयास किये जाते हैं जो समस्या समाधान और बुराइयों के उन्मूलन को सुगम बनाते हैं; फलस्वरूप लोगों, विशेषरूप से कमजोर और नष्ट करने योग्य वर्गों जिससे वे अपनी शक्तियों की अनुकूल रूप से अनुभूति कर सकें और समाज की मुख्य धारा के भाग और अंश के रूप में प्रभावपूर्ण रूप से कार्य कर सकें, को समर्थ करने के लिए समाज की परिस्थितियों में सुधार होता है। सामाजिक क्रिया की महत्वपूर्ण विशेषतायें जो कि समाज कार्य में प्रयुक्त होती हैं। वे इस प्रकार हैं

1) यह समाज कार्य की एक पद्धति है जो कि अन्य पद्धतियों के घनिष्ट सहयोग के साथ कार्य करती है।

2) इसका लक्ष्य सामाजिक संरचना और व्यवस्था में परिवर्तन लाना है जिससे, लोग अपनी अन्तर्निहित एवं सहज क्षमताओं की अनुभूति करने के योग्य हो सकें और समान धरातल पर सामाजिक क्रियाशीलता में भाग ले सकें। सामाजिक क्रिया का मूलभूत लक्ष्य सामाजिक और आर्थिक समानता को बढ़ावा देना तथा अन्याय, दुर्व्यवहार और शोषण को रोकना है।

3) सामाजिक क्रिया के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है जो कि सम्भवतः सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन के प्रति स्वभाव से सुधारात्मक निर्देशित हो सकती है या यह सम्भवः नयी संस्थाओं के स जन अथवा विद्यमान संस्थाओं को समाज के कुछ निश्चित प्रबल वर्गों के निहित स्वार्थों द्वारा संकटग्रस्त कर देने पर उनके प्रबलीकरण के प्रति विकासात्मक युक्त हो सकती है।

4) सामाजिक क्रिया की पद्धति आत्मविवेकीकरण, जागरूकता उत्पन्न करने, सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा देने, लोगों के स्वयं के संगठनों के निर्माण करने एवं प्रबलीकरण करने, संवाहक नीतियों के निरूपण करने, सामाजिक रूप से स्वस्थ्य कानूनों का अधिनियमन करने, विद्यमान सामाजिक बुराइयों जो लोगों के इच्छित विकास में बाधा डालती हैं और सामाजिक प्रगति को अवरुद्ध करती हैं, का उन्मूलन करने के माध्यम से समाज में इच्छित परिवर्तनों में सहायक होने के उपायों का पता लगाती है।

5) सामाजिक क्रिया अपनी मूलभूत प्रकृति से अहिंसात्मक है। निश्चितरूप से, समाज में जिस समय निहित स्वार्थ विद्यमान होते हैं–वह शक्तियाँ जो कि प्रभुत्व और आधिपत्य का उपयोग करती है तथा यथापूर्व स्थिति को कायम रखना चाहती हैं। वे सामाजिक क्रिया एवं संचालन एवं सरकारी संयन्त्र में सम्मिलित लोगों की संगठित क्षमता के परिणामस्वरूप विरोध के स्वर का दमन, यहाँ तक कि हिंसा की विधियों का आश्रय लेते हुए, करने हेतु बेचैन हो जाती हैं। यद्यपि कुछ लेखकों जैसे ब्रिट्टो (1960) जो सामाजिक क्रिया प्रणाली की संघर्षात्मक प्रकृति का समर्थन करते है (सम्भवतः इस कारण से कि यह विशेष सुविधा प्राप्त लोगों और समृद्धों के निहित स्वार्थों तथा सुविधावंचित एवं हताश लोगों के स्वाभाविक हितों के बीच संघर्ष के कुछ प्रकारों को उत्पन्न करती है) तो भी व्यावहारिक धरातल पर ऐसी पद्धतियों और प्रविधियों को अपनाना और उनका अनुसरण करना चाहिये, जो कि हिंसा और रक्तपात को न प्रारम्भ करें। इस प्रकार, समाज में प्रबल और शक्तिशाली वर्गों के हृदय परिवर्तन के अभिगम के दो प्रकारों के निर्माण द्वारा, विभिन्न प्रकार की पाशविकताओं, दुर्व्यवहारों, दुख से पीड़ित लोगों के शोषण के प्रस्तुतीकरण और नीतियों, कानूनों तथा प्रवर्तन संयन्त्र में परिवर्तन के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन, जो कि मानवीय और सामाजिक विकास में परिणत हो सकता है।

6) एक पद्धति के रूप में सामाजिक क्रिया इरादा रखती है कि सभी शक्तियाँ तथा कथित 'अच्छा कार्य करने वालों' से दूर हों और यह वास्तविक रूप से ऐसे लोगों जो अभीष्ट हिताधिकारी हैं, को स्थानान्तरित कर दी जानी चाहिये और इसकी प्राप्ति के उद्देश्य से यह सामाजिक नीतियों, कानूनों, योजनाओं और कार्यक्रमों में इच्छित परिवर्तनों के लिए पुर्नप्रक्रिया को ग्रहण करता है।

सारांश

हम समाज कार्य से सम्बन्धित आधारभूत अवधारणाओं और इससे सम्बन्धित विषयों की अपनी प्रस्तावना के अन्तिम निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। जैसे–जैसे पाठ्यक्रम आगे बढ़ेगा आप इन अवधारणाओं को बारम्बार प्राप्त करेंगे और आपका ज्ञान अधिक स्पष्ट हो जायेगा। जब आप समाज कार्य की पद्धतियों या शोध के संचालन हेतु क्षेत्र में जायेंगे तो इन अवधारणाओं की अत्यधिक परीक्षा हो जायेगी। सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक सेवायें, समाज कल्याण और सामाजिक प्रतिरक्षा मौलिक रूप से सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों से सम्बन्धित हैं। सामाजिक सेवायें समाज को प्रदत्त कोई अनुदान या सहायता से सम्बन्धित होती हैं जो इसके सदस्यों को एक नागरिक के रूप में कार्य करने हेतु सक्षम बनाती हैं। दूसरे शब्दों में, इसमें समाज के मानवीय संसाधनों को सुधारने के सभी प्रयास सम्मिलित हैं। दूसरी ओर

सामाजिक प्रतिरक्षा में समाज द्वारा विचलित व्यवहारों, जो सामाजिक विघटन उत्पन्न कर सकते हैं, के निवारण के सभी प्रयास सम्मिलित हैं।

सामाजिक सेवा प्रोत्साहक है परन्तु इसके विपरीत सामाजिक प्रतिरक्षा निवारक तथा पुर्नवासनात्मक है। सामाजिक सुरक्षा विभिन्न जोखिमों जैसे बीमारी, अभाव, बेरोजगारी और आलस्य से नागरिकों के संरक्षण से सम्बन्धित होती है। समाज कल्याण नागरिकों को उन सेवाओं और वस्तुओं जो नागरिकों को एक उत्पादक और संतोषजनक जीवन के लिए आगे बढ़ने में सहायता करेगा, की व्यवस्था करने के लिए समाज सेवाओं की संगठित व्यवस्था और संस्था है।

हमारे देश में सामाजिक न्याय एक अत्यधिक विचारणीय विषय है। स्पष्ट रूप से इस अवधारणा में बहुत से आयाम हैं। मूलरूप से इसका तात्पर्य है कि समाज का प्रत्येक सदस्य अपनी परिलब्धि को प्राप्त करे, यह एक निष्कपट व्यवहार है। यह उन सभी मूल्यों जो असमानता, हिंसा, विशेषाधिकारों के अतिक्रमण इत्यादि का समर्थन करते हैं उनके विरुद्ध होता है। सामाजिक न्याय, सामाजिक नीति का अधिक बड़ा भाग है जिसकी भी चर्चा की जा चुकी है। नीति को एक रूपरेखा के रूप में जिसके अन्तर्गत निश्चित प्रक्रिया को कुछ निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अपनाया जाता है परिभाषित किया जा सकता है।

अन्ततः हमने समाज कार्य के विषय में चर्चा की और इस पर एक संक्षिप्त विचार प्रस्तुत किया। निःसन्देह, बाद में आप समाज कार्य के विषय में विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे। यद्यपि समाज कार्य के अन्तर्गत छः पद्धतियाँ हैं, हमने केवल एक पद्धति, सामाजिक क्रिया की चर्चा की और यह शब्द विभिन्न विषयों में भिन्न भिन्न रूप से प्रयुक्त होता है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एन्डरसन,जे.पी. (1945), "सोशल वर्क ऐज ए प्रोफेशन," इन सोशल वर्क ईयर बुक, रसेल सेज फाउण्डेशन, न्यूयार्क।

ऐलेन, सी.के., (1950), ऐस्पेक्ट्स ऑफ जस्टिस, स्टीवेन्स एण्ड सन्स, लंदन।

बेवेरिज, सर विलियम, (1942), सोशल इन्श्योरेन्स एण्ड एलाइड सर्विसेज– रिपोर्ट प्रेजेन्टेड टू ब्रिटिश पार्लियामेन्ट।

बोएम,डब्ल्यू0 एच, (1959), ऑबजेक्टिव्स ऑफ सोशल वर्क करिकुलम ऑफ दि फ्यूचर, काउन्सिल आन सोशल वर्क एजूकेशन, न्यूयार्क।

चेनी, ऐलिस, (1926), नेचर एण्ड स्कोप ऑफ सोशल वर्क अमेरिकन ऐसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कर्स, न्यूयार्क।

क्लार्क, हेलेन आई., (1947), प्रिंसिपिल्स एण्ड प्रैक्टिस ऑफ सोशल वर्क, एप्पलेटन सेन्चुरी–क्रॉफ्ट्स, न्यूयार्क।

दासगुप्ता, सुगाता, "सोशल एक्शन", इन मिनिस्ट्री ऑफ सोशल वेल्फेयर, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया (सम्पादित), इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया, वाल्यूम थ्री पब्लिकेशन्स डाइमेन्शन्स, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, न्यू डेल्ही

देशमुख, दुर्गाबाई, (1960), "प्रीफेस," दि प्लानिंग कमीशन, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया (सम्पादित) सोशल वेल्फेयर इन इण्डिया, दि पब्लिकेशन्स डाइमेन्शन्स, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया।

डायस, आर. डब्ल्यू.एम.,(1985), ज्यूरिसप्रूडेन्स, बटरवर्थ, लंदन।

आइडेन, जान एल.एम., (1969), सोशल पॉलिसी इन एक्शन, रूटलेज एण्ड केगन पॉल, लंदन।

फिंक, अर्थर ई., (1942), दि फील्ड ऑफ सोशल वर्क, हेनरी हॉल्ट कं., न्यूयार्क।

फ्लेक्सनर, अब्राहम, (1915), "इज़ सोशल वर्क ए प्रोफेशन?" ऐन स्टडीज़ इन सोशल वर्क, वाल्यूम–4, न्यूयार्क स्कूल ऑफ फिलेन्थ्रोपी, न्यूयार्क।

फ्रीडलेन्डर, वाल्टर ए; (1963), इन्ट्रोडक्शन टू सोशल वेल्फेयर, प्रेन्टिस हाल ऑफ इण्डिया (प्रा) लि, न्यू डेल्ही।

गोविन्द, के. बी. (1995), रिफॉर्मेटिव लॉ एण्ड सोशल जस्टिस इन इण्डियन सोसाइटी, रीजेन्सी पब्लिकेशन्स, न्यू डेल्ही।

इण्टरनेशनल लेबर आर्गेनाइजेशन, (1942), ऐप्रोचेज़ टू सोशल सिक्योरिटी : ऐन इण्टरनेशनल सर्वे, आई. एल. ओ. जेनेवा।

खिन्दुका, एस. के., (1962), "दि मीनिंग ऑफ सोशल वर्क" इन एस. के. खिन्दुका (सम्पादित), सोशल वर्क इन इण्डिया, सर्वोदय साहित्य समाज, जयपुर।

कृभणा अय्यर, जस्टिस वी. आर., (1980), जस्टिसे एण्ड बियान्ड, दीप एण्ड दीप, न्यू डेल्ही।

कृभणमूर्थी, एस., (1982), इम्पैक्ट ऑफ सोशल लेजिस्लेशन ऑन दि क्रिमिनल लॉ ऑफ इण्डिया, आर. आर. पब्लिशर्स, बैंगलोर।

कुलकर्णी, पी. डी., (1979), सोशल पॉलिसी एण्ड सोशल डेवलेपमेन्ट, ऐसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया, मद्रास।

कुलकर्णी, पी.डी., (1987), "सोशल पॉलिसी" इन मिनिस्ट्री ऑफ सोशल वेल्फेयर, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया (सम्पादित), इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया, वाल्यूम थ्री, पब्लिकेशन्स डिवीजन, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, न्यू डेल्ही।

मिलर, डेविड, (1976), सोशल जस्टिस, क्लारेन्डन प्रेस, आक्सफोर्ड।

मिनिस्ट्री ऑफ लेबर एम्प्लायमेन्ट एण्ड रिहैबिलिटेशन, (1969), गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, रिपोर्ट ऑफ दि नेशनल कमीशन ऑन लेबर इन इण्डिया।

पेटिट, पी., (1989), जजिंग जस्टिस–ऐन इन्ट्रोडक्शन टू कन्टेम्पोरेरी पॉलिटिकल फिलॉस्फी, रूटलेज एण्ड केगन पॉल, लन्दन।

सिंह, सुरेन्द्र, (1998), "सोशल जस्टिस थ्रू रिसर्वेशन," जस्टिफिकेशन एण्ड स्ट्रेटेजीज फॉर इन्क्रीजिंग इट्स इफेक्टिवनेस" इन बर्थवाल सी.पी. (सम्पादित), सोशल जस्टिस इन इण्डिया, भारत बुक डिपो, लखनऊ।

स्किडमोर, रेक्स ए. मिल्टन जी. थैकेरे एवं ओ. विलियम फेयर्ले, इन्ट्रोडक्शन टू सोशल वर्क, प्रेन्टिस हाल, इन्गलवुड क्लिफ्स, न्यू जर्सी, 1991

विलेन्स्की, हारोल्ड एल एण्ड चार्ल्स एन. लेबेआउक्स, इण्डस्ट्रियल सोसाइटी एण्ड सोशल वेल्फेयर, रस्सेल सेज फाउण्डेशन, न्यूयार्क, 1958

विलेन्सी, हारोल्ड एल. एण्ड चार्ल्स एन. लेबेआउक्स, कन्सेप्शन ऑफ सोशल वेल्फेयर, इन एम. एन. जाल्ड (सम्पादित), सोशल वेल्फेयर इन्सटिट्यूशन्स–ए सोशियोलॉजिकल रीडर, जॉन विले एण्ड सन्स, न्यूयार्क, 1965

जास्त्रो, चार्ल्स, इन्ट्रोडक्शन टू सोशल वेल्फेयर इन्सटिट्यूशन्स–सोशल प्रॉब्लेम्स, सर्विसेज एण्ड करेन्ट इश्यूज, दि डॉर्से प्रेस, होमवुड, इल्लिनोइस, 1978